बुद्ध

प्रथम अध्याय

ऐतिहासिक बुद्ध

1

महान जीवन

1. शाक्य-वंशीय क्षत्रिय हिमालय की दक्षिणी उपत्यका में बहनेवाली रोहिणी नदी के तट पर बसे हुए थे। उनके गौतम-गोत्रीय कुलीन राजा शुद्धोधन ने कपिलवस्तु को अपनी राजधानी बनाया और वहाँ एक विशाल दुर्ग का निर्माण किया। राजा प्रजावत्सल था और प्रजा राजभक्त।

रानी महामाया राजा के मामा देवदेह के राजुल की राजपत्री और शाक्यों की एक उपशाला कोलिय-वंश की थी।

विवाह को पच्चीस वर्ष हो गए, फिर भी उनके कोई सन्तान न हुई। तब एक दिन रानी महामाया ने रात में एक अनोखा सपना देखा: दक्षिण पार्श्व से एक सफेद हाथी उसके गर्भाशय में प्रविष्ट हो गया। और रानी गर्भवती हो गई। राजा और प्रजा दोनों ही उत्कंठा से राजपुत्र के जन्म की प्रतीक्षा करने लगे। उस समय की प्रथा के अनुसार प्रसूति के हेतु रानी ने अपने पितृगृह के लिए प्रस्थान किया। वसन्त ऋतु अपने यौवन पर थी। मार्ग में रानी ने लुम्बिनी वन में विश्राम किया।

चारों ओर अशोक वृक्ष फूलों से लहलहा रहे थे। उमंगित होकर एक पुष्पित टहनी को लेने के लिए जैसे ही रानी ने अपना दाहिना हाथ बढ़ाया, उसे प्रस्व हो गया। और इस तरह राजकुमार का जन्म हुआ। स्वर्ग और पृथ्वी सर्वत्र आनन्द छा गया। जड–जंगम सभी ने रानी का गौरव–गान करते हुए सद्यःजात कुमार की कल्याण–कामना की। उस दिन वैशाख मास की पूर्णिमा (अप्रैल महीने की आठ तारीख) थी।

राज शुद्धोधन की खुशी का कोई पार न था। उसने बच्चे का नाम सिद्धार्थ रखा, जिसका अर्थ है : सभी इच्छाओं की सिद्धि (पूर्ति)।

2. किन्तु राजमहल में सुख की ओट में दुःख भी छिपा हुआ था। क्योंकि थोड़े ही दिनों में महारानी मायादेवी परलोक सिधार गईं। तब राजपुत्र का पालन–पोषण महारानी की छोटी बहन महाप्रजापति ने किया।

उन दिनों हिमालय में असित नामक ऋषि तपस्या कर रहे थे। जब उन्हें कपिलवस्तु दुर्ग पर प्रभामंडल दिखाई दिया तो उसे शुभ शकुन समझकर वे वहाँ आए। राजकुमार को देखकर उन्होंने भविष्यवाणी की, ‘‘यदि बड़ा होकर कुमार महल में रहा तो चारों खण्ड पृथ्वी का चक्रवर्ती राजा बनेगा। लेकिन यदि गृहत्याग कर संन्यासी हो गया तो विश्व का उद्धार करनेवाला बुद्ध बनेगा।’’

भविष्यवाणी सुनकर पहले तो राजा प्रसन्न हुआ, परन्तु बाद में चिन्तामग्न रहने लगा कि अगर एकाकी पुत्र गृहत्यागकर संन्यासी हो गया तो क्या होगा?

सात साल का होने पर राजकुमार का विद्यारम्भ हुआ और वह नीति–शास्त्र और रणकौशल सीखने लगा। साथ ही वह विश्व की विसंगतियों पर भी चिन्तन करता रहता। वसंत ऋतु के एक दिन वह अपने पिता के साथ राजप्रसाद से बाहर घूमने निकला। एक खेत में उसने किसान को हल चलाते और हल के फाल से उखड़कर बाहर आए हुए एक छोटे कीड़े को झपटकर ले जाती हुई चिड़िया को देखा। यह देख वह एक वृक्ष की छाया में जा बैठा और अस्फुट स्वर में सोचने लगा :

'हाय, क्या सब जीव एक दूसरे को मार डालते हैं?'

जन्मते ही मातृविहीन राजकुमार ने जब जीवजगत का यह मत्स्यन्याय और लघु जीवों की असहायता एवं दुर्दशा देखी तो उसका हृदय विदीर्ण हो गया। जिस तरह छोटे पेड़ पर किया क्षत उसकी बाढ़ के साथ गहरा होता जाता है उसी प्रकार मानवी दु:ख उसके मन में गहरा पैठता चला गया।

यह स्थिति देखकर और ऋषि की भविष्यवाणी का स्मरण कर राजा शुद्धोधन बहुत चिंतित रहने लगे; और तब वे राजकुमार का मन किसी तरह बहलाकर अन्य बातों में लगाने की कोशिश में जुट गए। राजकुमार जब उन्नीस साल का हुआ, तब राजा ने उसका विवाह राजकुमारी यशोधरा से कर दिया, जो रानी महामाया के भाई, देवदेह के राजा,

सुप्रबुद्ध की कन्या थी।
3. उसक पश्चात् दस वर्ष राजकुमार वसंत, वर्षा और शरद ऋतुओं के लिए अलग-अलग बनवाए गए महलों में संगीत, नृत्य और आमोद-प्रमोद में डूबा रहा; किन्तु बीच-बीच में जब भी वह मानव-जीवन का सच्चा हेतु समझने की कोशिश करता तो दुःख की समस्या उसके सामने मुँह बाए खडो हो जाती।

"ये राजसी विलास, यह स्वस्थ शरीर, लोगों को आनन्दित करनेवाला यह यौवन-अन्ततोगत्वा मेरे लिए इनका क्या अर्थ है? कभी मनुष्य रोगी हो जाता है, एक दिन बूढ़ा हो जाता है, मृत्यु से तो कभी बच नहीं सकता। यौवन-मद, रूप, सौन्दर्य और स्वास्थ्य का अभिमान, जीवित रहने का गर्व–ये सब निस्सार हैं। विचारशील आदमी को इनका परित्याग करना चाहिए।

"जीवन-संघर्ष में रत मनुष्य को अवश्यमेव किसी मूल्यवान वस्तु की खोज रहती है। उसकी खोज का लक्ष्य सही भी हो सकता है और गलत भी। अगर लक्ष्य का सन्धान गलत है तो वह यही मानेगा कि रोग, बुढ़ापा और मृत्यु अपरिहार्य हैं और तब वह सही मार्ग से भटककर जो अस्थिर, अस्थायी और अशाश्वत है उसी को खोजता रहेगा।

"अगर उसका लक्ष्य-सन्धान सही है तो वह रोग, बुढ़ापे और मृत्यु के यथार्थ रूप को समझकर उस परमसत्य की तलाश करेगा, जिसे खोजकर सभी मानवी दुःखों का तिरोहण संभव है। इस समय में निश्चय ही अस्थिर और अस्थायी की खोज में पड़ा हुआ हूँ।

4. राजकुमार के मन में यह अन्तःसंघर्ष, 21 वर्ष की आयु में, उसके पुत्र राहुल के जन्म लेने के समय तक, अबाध गति से चलता रहा। पुत्र-जन्म क बाद राजकुमार के इस संघर्ष का चरमोत्कर्ष गृहत्याग-कर प्रवजित होने के उसके निश्चय के रूप में हुआ। एक रात अपने सारथी छन्दक को साथ लिए श्वेत अश्व कंथक पर आरूढ़ राजकुमार ऐहिक सुखों का परित्याग कर अपने राजमहल से निकल पड़ा।

गृहत्यागकर भी उनके मनोन्मथन का शमन नहीं हुआ। मार पुरन्त उसके पीछे पड़ गया और लुभाने लगा : "राजमहल लौट जाओ। समय की प्रतीक्षा करो। सारा संसार तुम्हारे चरणों में होगा।" राजकुमार ने उसे फटकार दिया : "हट जाओ, मार! इस पृथ्वी पर की किसी वस्तु की मैं अपेक्षा नहीं करता।" इस तरह राजकुमार ने मार को भगा दिया, अपना सिर मूड़ा लिया और भिक्षापात्र लेकर दक्षिण दिशा की ओर चल दिया।

सर्वप्रथम राजकुमार ने भृगु ऋषि के आश्रम में जाकर तपस्या की। उसके पश्चात् आलार कालाम तथा उद्रक रामपुत्र के पास जाकर उनसे ध्यान, समाधि और मोक्ष-प्राप्ति के उपाय सीखे और उनकी साधना की। किन्तु शीघ्र ही उन्हें पता चल गया कि इससे निर्वाण की प्राप्ति नहीं हो सकती, तब वे मगध चले गए और वहाँ गया नगर के समीप नैरंजरा नदी के तट पर उरुवेला बन में घोर तपस्या आरम्भ की।

5. वह सचमुच उग्र तपस्या थी। जैसा कि गौतम ने बाद में स्वयं कहा :

''भूत, वर्तमान या भविष्य के किसी तपस्वी ने इतनी उग्र तपस्या न तो की है, न कोई इसके पश्चात् कर पाएगा।'' ऐसी घोर तपस्या थी उनकी। फिर भी इस तपस्या से राजकुमार को वह वस्तु प्राप्त न हो सकी, जिसकी उन्हें खोज थी। तब उन्होंने छह वर्ष की इस तपस्या को निमिषमात्र में त्याग दिया। नैरंजरा नदी में स्नानकर, शरीर को निर्मल किया और सुजाता नामक कन्या के हाथ से पायस का ग्रहणकर स्वास्थ्य-लाभ किया।

यह देख जो पाँच तपस्वी गौतम के साथ उसी वन में तपस्या कर रहे थे, वे राजकुमार को तपभ्रष्ट हुआ मानकर, उनका साथ छोड़कर दूसरे स्थान पर चले गए।

अब राजकुमार बिलकुल अकेले रह गए। वह शांति से एक वृक्ष के नीचे आसन लगाकर बैठ गए और प्राणप्रण से उन्होंने अन्तिम ध्यान में प्रवेश किया। ''चाहे मरा रक्त क्यों न सुख जाए, माँग क्यों न झड़ जाए, हड्डियाँ क्यों न गल जाएँ, मैं सम्यकुसंबोधि प्राप्त किए बिना इस आसन को नहीं छोड़ूँगा।'' यह था राजकुमार का उस समय का दृढ़ संकल्प।

उस दिन राजकुमार के हृदय में जो भीषण संघर्ष चल रहा था वह अतुलनीय है। संभ्रान्त, विमूढ़ मनः उद्वेगकारी व्यग्रता; हृदय पर छाई हुई। काली उदास घटा; विद्रुप विचारों की घिनौनी आकृतियाँ-मानो मार-सेना का प्रबल आक्रमण ही था राजकुमार ने हृदय के कोने-कोने में उनका

पीछा किया और अलग-अलग उनसे द्वन्द्व कर पराजित किया। सचमुच वह खून को सुखानेवाला, माँस को क्षत-विक्षत और हड्डियों को चूर-चूर करनेवाला भीषण संग्राम था।

किन्तु यह युद्ध भी समाप्त हो गया और पौ फटने पर जब राजकुमार ने प्रभात-तारे की ओर गर्दन उठाकर देखा तब उनका हृदय प्रकाशमय हो गया था। उन्होंने संबोधि को प्राप्त कर लिया था, वे बुद्ध बन गए थे। राजकुमार की आयु उस समय 35 वर्ष की थी और वह दिन था आठ दिसम्बर का सवेरा।

6. इसके पश्चात् राजकुमार बुद्ध, अनुत्तरसम्यकुसंबुद्ध, तथागत, शाक्यमुनि अर्थात् शाक्यों के ऋषि, भगवान आदि विविध नामों से पुकारे जाने लगे।

शाक्यमुनि सबसे पहले, छह वर्ष तक जिन पाँच भिक्षुओं ने उनके साथ तपस्या की थी उन पंचवर्गीय भिक्षुओं को उपदेश देने के लिए वाराण्सी नगर के मृगदाव पहुँचे। प्रारम्भ में तो शाक्यमुनि को उन भिक्षुओं ने टालने का प्रयत्न किया, किन्तु उनका उपदेश सुनकर वे उनपर श्रद्धा करने लगे और उनके सर्वप्रथम शिष्य बन गए। फिर भगवान बुद्ध राजगृह चले गए। वहाँ उन्होंने राजा बिंबिसार को उपदेश किया। उनके पश्चात् राजगृह को धर्मोपदेश का मूलस्थान बनाकर वे उत्साह से दूर-दूर तक धर्म का प्रचार करने के लिए जाने लगे।

तृषित जैसे जल चाहते हैं, भूखे जैसे अन्न के लिए लालायित होते हैं, वसे लोग भगवान बुद्ध के पास इकट्ठा होने लगे। सारिपुत्र तथा मौदृगल्यायन जैसे दो महान शिष्य और उनके लगभग दो हजार अनुयायी भगवान बुद्ध की शरण में आ गए।

गौतम के गृहत्याग से व्यथित पिता शुद्धोधन पहले तो टालते रहे परन्तु बाद में उनके शिष्य हो गए। साथ ही उनकी मौसी महाप्रजापति और पत्नी यशोधरा भी शिष्य बनीं और शाक्यवंश के सभी लोग उनकी शरण में गए और शिष्य एवं अनुयायी बन गए। उनके अतिरिक्त असंख्य नरनारी उनके अनुयायी, उपासक और शिष्य बन गए।

7. इस प्रकार धर्म का प्रचार करते हुए भगवान बुद्ध 45 वर्ष भ्रमण करते रहे। अस्सी वर्ष की आयु में राजगृह से श्रावस्ती जाते हुए रास्ते में वैशाली में वे बीमार हो गए। उस समय उन्होंने भविष्यवाणी की : ''तीन मास बाद तथागत का परिनिर्वाण होगा।'' उसके बाद वे पावा चले गए। वहाँ चुन्द लोहार द्वारा समर्पित भोजन ग्रहण करने से उनकी बीमारी और बढ़ गई। सख्त पीड़ा को दबाकर वे कुसीनारा पहुँचे।

भगवान बुद्ध नगर के बाहर शाल-बन में पहुँचे और वहाँ जुड़वे शाल वृक्षों के बीच लेट गए। परम कारुणिक शाक्यमुनि अंतिम साँस तक शिष्यों को उपदेश करते रहे। इस प्रकार विश्व के महानतम धर्मशास्ता ने अपना जीवन-कार्य समाप्तकर शांतिपूर्वक परिनिर्वाण प्राप्त किया।

8. कुसीतारा के लोग भगवान के परिनिर्वाण से शोकविह्वल हो उठे। बुद्ध के परमप्रिय शिष्य आनंद के मार्गदर्शन में भगवान का विधिवत् दाह-संस्कार किया गया।

उस समय मगघ-नरेश अजातशत्रु आदि भारत के आठ राजाओं ने माँग की कि भगवान की अस्थियाँ उनको वितरित की जाएँ। जब कुसीनारा के लोगों ने इनकार कर दिया तो विवाद खड़ा हो गया और लगा कि उसका अन्त युद्ध में होगा। किन्तु एक समझदार ब्राह्मण द्रोण की मध्यस्थता के कारण अस्थियों को आठ राज्यों में बाँट दिया गया। उसके अतिरिक्त अस्थिकुंभ द्रोण ब्राह्मण को और बचे हुए कोयले पिप्पलीवन के मौरियों को प्रदान किए गए। सभी देखों में तथागत की अस्थियों की पूजा की गई और उनपर भगवान बुद्ध के दस महास्तूपों का निर्माण किया गया।

2
अंतिम उपदेश

1. भगवान बुद्ध ने कुसीनारा के बाहर शाल-उपवन में अपना अंतिम उपदेश किया।

"भिक्षुओ, आत्मदीप बनो, आत्म-शरण बनो, किसी दूसरे पर आधारित मत रहो। धर्मदीप बनो, धर्मशरण बनो। दूसरे उपदेशों पर आधारित मत रहो।

‘‘अपने शरीर को देखो। उसके मलों का ख्याल कर उसके प्रतिआसक्ति मत रखो। असकी वेदना, उसका आनंद सभी दु:ख का मूल बनते हैं, उनके प्रति हम आसक्त कैसे हो सकते हैं? अपने हृदय को देखो उसमें आत्मा–जैसी कोई वस्तु नहीं है यह जानकर, उसके मोह में फँसना नहीं चाहिए। ऐसा करने स हम सभी दु:खों का निरोध कर सकते हैं। इस संसार से मेरे चले जाने के बाद भी, तुम लोग इस प्रकार मेरे उपदेश का पालन करते रहो। तभी तुम मेरे सच्चे शिष्य कहलाओगे।

2. ‘‘भिक्षुओ, अबतक मैंने तुम लोगों के लिए जो धर्म और विनय के उपदेश किए हैं, उन्हें सदा सुनते रहो, उनपर विचार करते रहो, उनका आचरण करते रहो। उनका त्याग कभी नहीं करना चाहिए। अगर तुम उनके अनुसार आचरण करते रहोगे तो तुम्हारा जीवन सदा सुख से परिपूर्ण होगा।

‘‘उपदेश की कुंजी है अपने हृदय पर काबू पाना। इसलिए वासनाओं को संयमित करके अपने–आप पर विजय पाने का प्रयास करते रहो। शरीर को पवित्र रखो, मन को शुद्ध रखो, सदा सत्य वचन बोलो। लोभ का त्याग करो, क्रोध मत करो, पाप से दूर रहो, और सदा अनित्यता का चिंतन करते रहो।

‘‘अगर हृदय मोह के वश होकर, लोभ का शिकार बनने की नौबत आ जाए, तो उसका दृढ़तापूर्वक दमन करना चाहिए। हृदय के दास न

बनकर, हृदय के स्वामी बनो।

''मनुष्य का हृदय उसे बुद्ध उसे बुद्ध भी बना सकता है और पशु भी बना सकता है। मोह में फँसकर वह राक्षस बनता है, और निर्वाण प्राप्त कर वह बुद्ध बनता है। यह सब हृदय का खेल है। इसलिए हृदय पर नियंत्रण रखकर, उसे सच्चे पथ से विचलित न होने देने का प्रयास करते रहो।

3. ''भिक्षुओ, तुम लोगों को मेरे धर्म का पालन करते हुए आपस में मिलजुलकर रहना चाहिए, एक दूसरे का आदर-सत्कार करना चाहिए, आपस में झगड़ना नहीं चाहिए। पानी आर दूध के समान एक दूसरे में घुलमिल जाओ। पानी और तेल के समान एक दूसरे को नकारना नहीं चाहिए।

''सब मिलकर धर्म की रक्षा करो, मिलकर अध्ययन करो, मिलकर उसका आचरण करो, एक दूसरे को प्रोत्साहित करते हुए, साधना का आनन्द एक साथ लूटो। बेकार बातों की ओर ध्यान देकर, व्यर्थ बातों में समय बरबाद न करो। निर्वाण के पुष्प को तोड़कर, सच्चे पथ के फल को हस्तगत करो।

''भिक्षुओ, इस धर्म का स्वयं साक्षात्कार करके, मैंने उसका तुम लोगों को उपदेश किया है। तुम लोग इसकी ठीक रक्षा करो और उसका अनुकरण करते हुए आचरण करते रहो।

''अतः जो इस उपदेश के अनुसार आचरण नहीं करते, वे मुझसे मिलकर भी नहीं मिले, मेरे साथ रहकर भी मुझसे दूर हटे हुए हैं। दूसरी ओर इस उपदेश के अनुसार आचरण करनेवाला मुझसे दूर रहते हुए भी मेरे निकट रहता है।

4. ''भिक्षुओ, मेरा अन्त अब बहुत निकट है। हमारा वियोग अब दूर नहीं है। फिर भी शोक मत करो। यह संसार अनित्य है, यहाँ ऐसा कोई नहीं जो जन्म लेकर मरता नहीं। अब मेरा शरीर जर्जर शकट के समान टूट जाएगा, यह भी इसलिए होगा कि अनित्यता के सिद्धान्त को मै अपने शरीर को लेकर दिखा सकूं।

''व्यर्थ शोक मत करो। अनित्यता के इस सिद्धान्त को ध्यान में रखकर, मनुष्य-जीवन के सच्चे रूप को आँखें खोलकर देखना चाहिए। उसको सच्चे अर्थ में समझना चाहिए। जो नित्य परिवर्तनशील है, उसे अविकार्य बनाने का प्रयास करना व्यर्थ है।

''संसारिक क्लेशों के राक्षस सदा अवसर पाकर तुम लोगों पर आक्रमण करने के लिए तुले हुए हैं। यदि तुम्हारे कमरे में विषैला साँप रहता हो, तो जब तक तुम उसे कमरे से निकाल नहीं दोगे तब तक चैन की नींद नहीं सो सकोगे।

''क्लेशों के राक्षसों का पीछा करना चाहिए। क्लेशों के साँप का निकाल देना चाहिए। तुम लोगों को प्रयत्नपूर्वक अपने मन की रक्षा करनी होगी।

5. ''भिक्षुओ, अब मेरी अंतिम घड़ी है। किन्तु यह भूलना नहीं चाहिए कि यह मृत्यु केवल शरीर की मृत्यु होगी। क्योंकि शरीर माता-पिता से पैदा होता है और अन्न द्वारा उसका पोषण होता है, उसका व्याधिग्रस्त होता और नष्ट हो जाना अपरिहार्य है।

''किन्तु बुद्ध का वास्तव स्वरूप शरीर नहीं, अपितु निर्वाण होता है।

शरीर के नष्ट हो जाने पर भी निर्वाण धर्म और साधना के रूप में अनंतकाल तक जीवित रहता है। इसलिए जो केवल मेरे शरीर को देखता है, वह सच्चे अर्थ में मुझे नहीं देखता। जो मेरे धर्म को जानता है, वही सचमुच मुझे देखता है।

''मेरे देहान्त के बाद, मेरा उपदेशित धर्म ही तुम लोगों का शास्ता होगा। इस धर्म का अनुसरण करना ही तथागत की सेवा करना हे।

''भिक्षुओं, में अपने जीवन के अंतिम पैंतालीस वर्षों में जो कुछ धर्म-उपदेश देने चाहिए। थे, सब दे चुका हूँ, और जो कुछ करना चाहिए था, सब कर चुका हूँ। धर्मों में तथागत की कोई आचार्य-मुष्टि (रहस्य) नहीं है। तथागत ने सभी उपदेश स्पष्ट, अगुप्त और अकूट किए हैं। तथागत ने कुछ भी छिपाकर नहीं रखा। ''भिक्षुओ, अब मेरी अंतिम घड़ी है। मेरा अब परिनिर्वाण होगा। यह मेरा अंतिम उपदेश है।''

द्वितीय अध्याय

अनाद्यनन्त बुद्ध

1
उनकी करुणा तथा प्रणिधान

1. बुद्ध का हृदय परम कारुणिक है। सभी प्रकार के उपायों से सब सत्त्वों का उद्धार करनेवाला यह परम कारुणिक हृदय, बीमारों के साथ बीमार होनेवाला, पीड़ितों के साथ पीड़ित होनेवाला हृदय है।

जैसे माँ बच्चे का ख्याल करती है, ठीक वैसे ही एक क्षण भी छोड़कर चले न जानेवाला, संभालनेवाला, पालन-पोषण करनेवाला, उद्धार के लिए हाथ बढ़ाने वाला बुद्ध भगवान का हृदय है। ''तुम्हारा दु:ख मेरा दु:ख है, तुम्हारा सुख मेरा सुख है'' कहते हुए एक क्षण भी वह हमारा साथ नहीं छोड़ता।

बुद्ध की महाकरुणा सत्त्वों की आवश्यकताओं के अनुसार उत्पन्न होती है। इस महाकरुणा के स्पर्श से हृदय में श्रद्धा उत्पन्न होती है, श्रद्धावान हृदय के कारण निर्वाण का मार्ग खुल जाता है। यह ठीक वैसा ही है जैसे बच्चे को प्यार करने से माँ को अपने मातृत्व का साक्षात्कार होता है, और माँ के वत्सल हृदय के स्पर्श से बच्चे का हृदय आश्वासन प्राप्त करता है।

फिर भी लोग भगवान बुद्ध के इस हृदय को नहीं जानते और अज्ञान के कारण मोहग्रस्त होकर परेशान होते हैं और विविध क्लेशों के अधीन व्यवहार करके दु:खी होते ह। पाप-कर्मों की भारी गठड़ी सिर पर उठाकर, हाँफते-हाँफते, मोह के एक पर्वत से दूसरे पर्वत पर भटकते रहते हैं।

2. बुद्ध की करुणा केवल इसी जन्म के लिए, ऐसा मानना ठीक नहीं है। यह तो बहुत पहले से, जब से मनुष्य अज्ञानवश जन्म-मृत्यु के फेरे में फँसकर मोह पर मोह के पुट चढ़ाता आया तभी से चली जाती है।

बुद्ध सदा लोगों के सामने, लोगों का सबसे प्रिय आकार लेकर प्रकट होते रहते हैं और उद्धार के सभी उपाय उन्हें सुलभ करा देते हैं।

शाक्य-वंश के राजकुमार के रूप में जन्म लेकर उन्होंने प्रव्रज्या जी, उग्र तपस्या को, धर्म का साक्षात्कार किया, धर्म का उपदेश किया और अन्त में मृत्यु के अधीन होकर मृत्यु के सत्य का दर्शन कराया।

सत्त्वों के मोह की कोई सीमा नहीं है, इसलिए बुद्ध के उद्धारकार्य की भी कोई सीमा नहीं है। सत्त्वों के पापों की कोई थाह नहीं होती, इसलिए बुद्ध की करुणा भी अथाह होती है।

इसीलिए भगवान बुद्ध ने अपनी साधना के आरंभ में चार महाप्रणिधान (महासंकल्प) किए थे। (1) प्रतिज्ञापूर्वक सब सत्त्वों का उद्धार करना। (2) प्रतिज्ञापूर्वक सब क्लेशों से मुक्ति पाना। (3) प्रतिज्ञापूर्वक सब

उपदेशों का अध्ययन करना। (4) प्रतिज्ञापूर्वक अनुत्तर-सम्यक्संबोधि को प्राप्त करना। इस चार प्रतिज्ञाओं के आधार पर बुद्ध ने साधना की थी। बुद्ध की साधना के मूल में ये चार प्रणिधान हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि प्रेम और करुणा की अभिव्यक्ति ही बुद्धत्व की मूल प्रकृति हैं बुद्ध का हृदय सत्त्वों का उद्धार करने की इच्छा रखनेवाली उनकी महाकरुणा ही है।

3. भगवान बुद्ध ने बुद्ध बनने के लिए हिंसा (प्राणातिपात) के पाप से परावृत्त होने की साधना और उसके पुण्य के बल पर लोगों के दीर्घायुष्य की कामना की।

बुद्ध ने चोरी (अदत्त-आदान) के पाप से परावृत्त होने की साधना की और उसके पुण्य के बल पर लोग चाहें सो प्राप्त कर सकें, इस बात की कामना की।

बुद्ध ने काम-मिथ्याचार से परावृत्त होने की साधना की और उसके पुण्य के बल पर इस बात की कामना की कि लोगों के हृदय में अधम वृत्ति पैदा न हो तथा उनके शरीर को क्षुधा या तृष्णा से कष्ट न हो।

बुद्ध ने बुद्ध बनने के लिए मृषावाद से परावृत्त होने की साधना की और उसके पुण्य के बल पर इस बात की कामना की कि लोगों को सत्य वचन से प्राप्त होनेवाली हृदय की शांति का अनुभव हो सके।

दो तरह की बातें करने से परावृत्त होने की साधनाकर के उन्होंने इस बात की कामना की कि लोग सदा आपस में मिलजुलकर रहें और एक दूसरे से धर्म की बातें करें।

फिर निन्दा से परावृत्त होने की साधनाकर इस बात की कामना की कि लोगों का हृदय शांति का अनुभव करे और कभी अस्वस्थता का अनुभव न करे।

व्यर्थ बातों से परावृत्त होने की साधनाकर इस बात की कामना की कि लोगों में दूसरों की सहायता करने की भावना का विकास हो।

फिर बुद्ध ने बुद्ध बनने के लिए, लोभ से परावृत्त होने की साधना की और उसके पुण्य के बल पर लोगों का हृदय लोभरहित होने की कामना की।

द्वेष से परावृत्त होने की साधनाकर इस बात की कामना की कि लोगों के हृदय परस्पर सद्भावना से परिपूर्ण हों।

मृढ़ता से परावृत्त होने की साधनाकर इस बात की कामना की कि लोगों के हृदय में हेतु–फल के सिद्धान्त की उपेक्षा करने का गलत विचार पैदा न हो।

इस प्रकार, बुद्ध की करुणा का रुख सभी तत्त्वों के प्रति होकर उसका विशेष धर्म सभी सत्त्वों के सुख की कामना के सिवा और कुछ नहीं है। बुद्ध सभी सत्त्वों पर माता–पिता के समान एक–सा प्रेम करते और उन्हें भवसागर पार कराने की कामना करते हैं।

2
मोक्ष और उनके साधन

1. साक्षात्कार के किनारे खड़े होकर, भवसागर में डूबनेवाले लोगों को सम्बोधित करनेवाले बुद्ध के वचन, लोगों के कानों में सरलता से नहीं पड़ पात। परिनिर्वाण की सुदूर भूमिका से कहे गए बुद्ध के वचन भवसागर में डूबते-उतराते लोगों को सुनाई नहीं पड़ते। इर्सालए बुद्ध स्वयं भवसागर में उतरकर मोक्ष के अपने आविष्कृत साधन काम में लाते हैं।

"भन्ते, सुनो," तथागत ने कहा : "अब आपको एक दृष्टान्त-कथा सुनाएँ! एक नगर में एक महाधनी गृहपति रहता था। उसके घर में एक दिन आग लग गई। संयोग से वह बाहर गया हुआ था। लौटकर घर को जलते हुए देखकर वह हक्का-बक्का रह गया। उसने अपने बच्चों को पुकारा; किन्तु वे खेलने में इतने रमे हुए थे कि उन्हें आग का पता ही न चला। वे जलते हुए घर के अन्दर खेलते रहे। पिता ने बच्चों को चिल्लाकर पुकारा, 'बच्चो, भागो, जल्दी बाहर निकल जाओ।' किन्तु बच्चों का पिताजी के चिल्लाने की ओर ध्यान न गया।

"बच्चों की असुरक्षा के कारण चिंतित पिता ने तब बच्चों को इस प्रकार आवाज दी, 'बच्चो, यहाँ अनेक प्रकार के रमणीय अद्‌भुत खिलौने हैं। जल्दी बाहर आकर उन्हें ले लो।' खिलौनों का नाम सुनते ही बच्चे उत्साहित होकर जलते हुए घर से शीघ्र बाहर निकल आए और अनर्थ से बच गए।"

यह त्रैधातुक संसार सचमुच एक जलता हुआ घर है। किन्तु घर जल रहा है इसका सत्त्वों को पता ही नहीं। उनके वहीं जलकर मर जाने का डर है। इसलिए बुद्ध महाकारुणिक हृदय से अगणित साधनों से काम लेकर उन्हें बचाते हैं।

2. ''और एक दृष्टान्त सुनो,'' तथागत ने कहा : ''बहुत पहले किसी धनी गृहपति का इकलौता लड़का अपने पिता को छोड़कर किसी दूसरे देश चला गया और वहाँ दरिद्रता की खाई में गिर गया।

''पिता अपने गाँव को छोड़कर पुत्र की खोज में भटकता फिरा, पर बहुत प्रयत्न करने पर भी उसे अपने पुत्र का पता चल न सका।

''उसके बाद लगभग पचास साल बीत गए। अब वह पुत्र, जिसकी हालत बहुत दयनीय हो गई थी, संयोगवश घूमता-घामता उस नगर में आ पहुँचा, जहाँ उसका पिता रहता था।

''पिता ने तुरन्त अपने पुत्र को पहचान लिया और वह खुशी से उछल पड़ा। उसने पुत्र को ले जाने के लिए नौकरों को भेजा। किन्तु पुत्र के मन में भय-शंका पैदा हुई। ठगे जाने के डर से उसने उनके साथ चलने से इनकार कर दिया।

''फिर पिता ने दुबारा नौकरों को उसके पास भेजा और कहलवाया कि दुगुनी मजदूरी देकर गृहपति के घर में उसे काम दिलवाएँगे। पुत्र ने इस उपाय-कौशल्य से आकर्षित होकर काम करना स्वीकार किया और वहाँ नौकर हो गया।

''यह अपना घर है, यह न जानते हुए काम करनेवाले पुत्र को, उसके पिता गृहपति ने, धीरे-धीरे ऊँचा पद देकर अंत में सुवर्ण, रजत, धन-धान्य के कोष्ठागार की देखभाल करने का काम सौंप दिया, फिर भी, पुत्र को इस बात का पता न चला कि ये मेरे पिता हैं।

''पुत्र की ईमानदारी और स्वामीभक्ति से पिता बहुत प्रसन्न हो गया।

अपना अन्त समय निकट आया जान एक दिन पिता ने अपने संबंधियों, मित्रों और परिचितों को बुलाकर कहा, 'सज्जनो, यही मेरा पुत्र है, जिसे मैं कई वर्षों से खोज रहा था। अब से यह मेरी सारी संपत्ति का स्वामी है।'

"पुत्र पिता के इस कथन से विस्मित होकर बोला, 'आज मुझे न केवल अपने पिता मिल गए, अपितु यह सारी धन-संपत्ति भी मेरी हो गई।"

भगवान बुद्ध इस दृष्टान्त के गृहपति, और भटकनेवाला पुत्र सामान्य लोग हैं। बुद्ध की करुणा, इकलौते पुत्र के प्रति पिता के प्यार के समान, सभी मनुष्यों के प्रति बहती रहती है। बुद्ध सत्त्वों को अपना पुत्र समझकर उपदेश देकर उनका मार्गदर्शन करते हैं आर निर्वाण-प्राप्ति के ज्ञान का कोश देकर उन्हें सम्पन्न बनाते हैं।

3. सब सत्त्वों को अपने पुत्रों के समान एक-सा प्यार करनेवाले बुद्ध की महाकरुणा एक समान होते हुए भी सत्त्वों के स्वभाव की विभिन्नता के अनुसार उनके उद्धार के साधन भी भिन्न-भिन्न होते हैं। यह तो ठीक ऐसे ही है जैसे कि बादलों से बरसनेवाला जल एक-सा होता है, फिर भी उनका पान करनेवाली वनस्पतियाँ और वृक्ष अपने बीज की शक्ति के अनुसार विभिन्न विकास प्राप्त करते हुए बढ़ते हैं।

4. बच्चों की संख्या कितनी भी हो, माँ-बाप उन सबको एक-सा प्यार करते हैं; फिर भी उनमें अगर कोई बीमार बच्चा हुआ तो उसके प्रति उनका हृदय विशेष वत्सल होता है।

बुद्ध की महाकरुणा भी सब सत्त्वों के प्रति समान है, फिर भी विशेष कर जो लोग महापापी या अज्ञान के कारण कष्ट उठानेवाले होते हैं उनके

प्रति भगवान बुद्ध का प्रेम और करुणा विशेष रूप से प्रकट होती रहती है।

फिर जैसे कि सूर्य पूर्वाकाश में उदित होकर, अंधकार का नाश करके सब जीवों का पोषण करते हैं, उसी प्रकार बुद्ध इस संसार में अवतरित होकर पाप का नाश करके, पुण्य का पोषण करके, ज्ञान का प्रकाश फैलाकर, अज्ञान का तिमिर हटाकर लोगों को निर्वाण प्राप्त करा देते हैं।

बुद्ध प्यार-भरे पिता और वत्सलता-भरी माता होते हैं। संसार में फँसे हुए लोगों के प्रति अपनी अपार करुणा के कारण बुद्ध सतत उनके उद्धार के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। बुद्ध की करुणा के बिना लोगों का उद्धार नहीं हो सकता। पुत्र के रूप में लोगों को पिता बुद्ध के उद्धार के साधनों को स्वीकार करना चाहिए।

3

अनाद्यनन्त बुद्ध

1. सामान्य लोग मानते हैं कि भगवान बुद्ध ने राजपुत्र के रूप में जन्म लेकर, प्रव्रजित होकर निर्वाण प्राप्त किया था। किन्तु वास्तव में उन्हें बुद्धत्व प्राप्त किए अचिन्त्य सहसकोटि कल्प व्यतीत हो गए हैं।

इस अनन्त काल के बीच, बुद्ध सतत इस संसार में वर्तमान होकर, अनन्त बुद्ध के रूप में सभी प्राणियों के स्वभाव का परिपूर्ण ज्ञान प्राप्तकर, हर प्रकार के साधनों से उनका उद्धार करते आए हैं।

बुद्ध द्वारा उपदेशित अनन्त धर्म में कोई मृषावाद नहीं है। क्योंकि बुद्ध

संसार की सभी वस्तुओं को उनके सत्य स्वरूप में जानते हैं और सभी लोगों को उसके अनुसार उपदेश करते हैं।

सचमुच, संसार को उसके सत्य स्वरूप में जानना बहुत कठिन है। क्योंकि यद्यपि यह सत्य दिखाई देता है, सत्य नहीं होता; असत्य दिखाई देता है, पर असत्य नहीं होता। अज्ञानी लोग इस संसार के सत्य रूप को जान नहीं सकते।

अकेले बुद्ध उसको जैसा है वैसा जानते हैं। इसलिए बुद्ध संसार को न तो सत् कहते हैं न असत्, न भला कहते हैं न बुरा। केवल जैसा है वैसा बताते हैं।

बुद्ध जिस बात का उपदेश करना चाहते हैं वह यह है, ''सब लोगों को अपने-अपने स्वभाव, आचरण तथा श्रद्धाओं के अनुसार कुशल मंगलकारी भूलों का आरोपण करना चाहिए।''

2. बुद्ध न केवल वचनों द्वारा उपदेश करते हैं, अपितु अपने जीवन द्वारा भी। आयु अपरिमित होते हुए भी, बुद्ध कामलोलुपता से उकता न जानेवाले लोगों की आँखें खोलने के लिए, साधन रूप में परिनिर्वाण में प्रवेश करने का अभिनय करते हैं।

मान लीजिए कि एक अनेक पुत्रोंवाला वैद्य जब विदेश-यात्रा पर चला गया, तब उसकी अनुपस्थिति में उसके पुत्र विष पीकर वेदनाओं से आक्रान्त हो गए। वैद्य ने लौटकर यह स्थिति देखकर झटपट उनके लिए

एक श्रेष्ठ औषधि तैयार की। वैद्य के जो पुत्र अत्यधिक रोगाच्छन्न थे, उस दबा को पीकर रोगमुक्त हो सके, किन्तु जो विष से अति सम्मोहित थे उन्होंने उस दवा को पीने से इनकार कर दिया।

वैद्य ने पितृप्रेम के कारण, उनकी रोगमुक्ति के लिए एक आत्यंतिक उपाय में काम लेने का निश्चय किया–''मुझे लम्बी यात्रा पर जाना है। मैं बुद्ध हो गया हूँ, मेरी मृत्यु कभी भी हो सकती है। यदि मेरी मृत्यु की सूचना तुम्हें मिले तो यहाँ जो दवा मैंने रख छोड़ी है उसे पीकर तुम लोग स्वस्थ हो जाना।'' यह कहकर वह फिर यात्रा पर निकल गया। कुछ समय के बाद उसने दूत के द्वारा अपनी मृत्यु की सूचना उन्हें भेज दी।

पुत्रों ने यह सुनकर अत्यधिक शोक किया कि पिताजी चल बसे; हम लोग सर्वथा अनाथ हो गए। दुःख और निराशा में उन्हें पिता का चलते समय कहा हुआ वचन याद आया। उन्होंने उस दवा को खा लिया ओर कष्ट से मुक्त हो गए।

क्या लोग उस वैद्य-पिता को झूठ बोलने के लिए दोषी ठहराएँगे? बृद्ध भी इस पिता के समान ही हैं। बुद्ध कामलोलुपता में फँसे हुए लोगों के उद्धार के लिए इस संसार में अपने जन्म और मृत्यु को झूठमूठ दिखाया करते हैं।

तृतीय अध्याय

बुद्ध का रूप और उनके सद्गुण

1

बुद्ध के त्रिकाय

1. केवल रूप या आकार से बुद्ध को जानने या खोजने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। रूप या आकार सच्चा बुद्ध नहीं होता। सच्चा बुद्ध तो निर्वाण ही होता है। अत: जो निर्वाण को देखता है वही सच्चे अर्थ में बुद्ध को देखता है।

बुद्ध की लक्षण-संपदा देखकर अगर कोई कहे कि मैंन बुद्ध को देखा, तो वह अज्ञान की आँखों का दोषमात्र हैं बुद्ध का सच्चा रूप संसार के लोग देख नहीं सकते। कितना ही उत्तम वर्णन करने पर भी बुद्ध को जानना संभव नही है और उपयुक्ततम शब्दों में कहने पर भी बुद्ध का सच्चा रूप शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता।

सच्चा रूप कहने पर भी, वास्तव में बुद्ध का कोई नहीं है। फिर भी इच्छा के अनुसार वे अलग-अलग अद्भुत रूपों का दिग्दर्शन कराते हैं।

इसलिए जो मनुष्य उसे स्पष्ट रूप से देखते हुए भी, उसके रूप से आसक्त नहीं होता, वह सब बंधनों से मुक्त होकर बुद्ध को देख पाता है।

2. क्योंकि बुद्ध का शरीर निर्वाण होता है, उसका अस्तित्व अनन्त होता है, उसका कभी नाश नहीं होता। वह अन्न से धारण किया जानेवाला शरीर नहीं होता, अपितु प्रज्ञा से निर्मित दृढ़ शरीर होता है। इसलिए उसको किसी प्रकार का भय नहीं होता, व्याधि भी नहीं होती। वह अनन्त और अविकारी होता है।

अतः अनन्त काल तक बुद्ध का विनाश नहीं होता। जैसे निर्वाण का नाश नहीं होता, वैसे ही बुद्ध का भी कभी नाश नहीं होता। यह निर्वाण प्रज्ञा का प्रकाश बनकर प्रकट होता है और यह प्रकाश लोगों को ज्ञानालोक से मंडित कर बुद्धभूमि में उनके जन्म का कारण बनता है।

जिसे हम सिद्धान्त का ज्ञान हुआ वह बुद्धपुत्र बन जाता है और बुद्ध का उपदेश ग्रहण करके, बुद्ध के उपदेश का पालन करके अपनी अगली पीढियों के लिए उसे छोड़ जाता है। सचमुच बुद्ध की शक्ति से अद्‌भुत वस्तु इस संसार में और कोई नहीं है।

3. बुद्ध के तीन काय होते हैं—पहला धर्मकाय, दूसरा संभोगकाय और तीसरा निर्माणकाय।

धर्मकाय बुद्ध का धर्ममय शरीर है। संसार की यथार्थता, तथता का सिद्धान्त तथा उसका साक्षात्कार करनेवाली प्रज्ञा एक बनकर जो धर्म बनता है वही धर्मकाय है।

यह धर्म ही बुद्ध है, इसलिए बुद्ध का कोई रूप या आकार भी नहीं होता। क्योंकि रूप भी नहीं और आकार भी नहीं है, इसलिए कहीं से आना भी नहीं और कहीं जाना भी नहीं है। क्योंकि आना भी नहीं और जाना भी नहीं है, इसलिए वह सर्वथा परिपूर्ण है और आकाश की तरफ सब वस्तुओं को व्याप्त करता है।

न तो लोगों के मानने से वह अस्तित्व में आता है, न तो उसके भूल जाने से वह अन्तर्हित हो जाता है। न तो लोगों के प्रसन्न होने पर वह आता है, न तो लोगों के आलसी बनने पर चला जाता है। बुद्ध का अस्तित्व मनुष्यों के सभी मनोविकारों से परे होता है।

बुद्ध का यह शरीर विश्व में सर्वत्र व्याप्त होता है, सर्वत्र उसकी पहुँच होती है। लोग बुद्ध से संबंध में साधारणतया चाहे जो सोच लें, पर बुद्ध तो अनन्त काल तक अस्तित्व में होते हैं।

4. संभोगकाय बुद्ध निराकार धर्मकार बुद्ध का वह रूप है जो लोगों का दुःख–निवारण करने के लिए आकार में प्रकट होकर, प्रणिधान लेकर, साधनाकर के, अपना नाम प्रकटकर के लोगों का मार्गदर्शन और उद्धार करते हैं।

बुद्ध के इस स्वरूप का मूलतत्त्व करुणा है। विभिन्न साधनों द्वारा वे अनगिनत प्राणियों का उद्धार करते रहते हैं। सब वस्तुओं को जलाकर भस्म करनेवाली अग्नि के समान, वे प्राणियों के क्लेशों के ईन्धन को जला देते हैं और धूल को उड़ा ले जानेवाले पवन के समान प्राणियों के दु:ख की धूल उड़ ले जाते हैं।

निर्माणकाय के बुद्ध, बुद्ध के उद्धार को परिपूर्ण रूप देने के लिए, लोगों की विभिन्न प्रकृतियां के अनुसार रूप धारण करके जन्म लेते हैं, प्रव्रजित होते हैं, सम्यक्सबोधि प्राप्त करते हैं। और विभिन्न उपायों से लोगों का मार्गदर्शन करके व्याधि तथा मृत्यु का दर्शन कराके उन्हें सावधान करते हैं।

बुद्ध का शरीर वस्तुत: एक धर्मकाय ही है; क्योंकि प्राणियों की प्रकृतियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं, बुद्ध का शरीर अलग-अलग रूप धारण करके प्रकट होता है। फिर भी प्राणियों की अभिलाषाओं, उनके आचरण, उनकी योग्यताओं के अनुसार उनको दिखाई देनेवाले बुद्ध-रूप भिन्न होते हुए भी, बुद्ध तो उन्हें केवल एक ही सत्य का दर्शन करात हैं।

बुद्ध का शरीर इस प्रकार तीन कायों में बाँटा गया है, फिर भी उनका उद्देश्य केवल एक ही है–प्राणियों का उद्धार करना।

अपरिमित उत्तम शरीरों से सभी क्षेत्रों में बुद्ध प्रकट होते रहते हैं, तो भी

वे शरीर बुद्ध नहीं हैं। क्योंकि बुद्ध का कोई पार्थिव शरीर नहों होता। केवल निर्वाणमय शरीर के रूप में वे सब वस्तुओं में व्याप्त होते हैं और सत्य का साक्षात्कार करने वाले मनुष्य के सामने बुद्ध सदा प्रकट होते रहते हैं।

2
बुद्ध के दर्शन

1. बुद्ध का इस संसार में उत्पन्न होना बहुत दुर्लभ है। बुद्ध इस समय इस संसार में निर्वाण प्राप्तकर, धर्म का उपदेश करके, भ्रम के जाल को तोड़कर, वासनाओं के मूल को उखेड़कर, पाप के उद्‌गम को बन्द कर देते हैं। बिना किसी निर्बन्ध के अपनी इच्छा के अनुसार इस संसार में विचरण करते हैं। इस संसार में बुद्ध का आदर करने से बढ़कर और कुछ भी कल्याणकारी नहीं है।

बुद्ध इस संसार में इस उद्देश्य से अवतीर्ण होते हैं कि धर्म का उपदेश करके प्राणियों का सर्वोच्च कल्याण कर सकें। दु:ख-कष्ट-पीड़ित लोगों का अपने भाग्य-भरोसे छोड़ना, उनकी उपेक्षा करना बुद्ध के लिए संभव नहीं, इसीलिए बुद्ध इस दु:खमय संसार में अवतीर्ण होते हैं।

विवेकहीन, अन्यायपूर्ण, कामनालोलुप, शरीर और मन से अध: पतित, इस क्षणिक संसार में धर्म का उपदेश करना बहुत कठिन कार्य है। केवल अपनी महाकरुणा के कारण बुद्ध इस कठिनाई पर विजय पाते हैं।

2. बुद्ध इस संसार के सभी प्राणियों के कल्याण-मित्र हैं। क्लेशों के

भारीबोझ के नीचे दबे हुए मनुष्य को देखते ही बुद्ध करुणा करके उसका बोझ बँटाने लगते हैं।

बुद्ध इस संसार के सच्चे शास्ता, गुरु हैं। मूढ़, मोहग्रस्त मनुष्य के अज्ञान-तिमिर को वे प्रजा की किरणों से ध्वस्त कर देते हैं।

जिस तरह बछड़ा कभी गाय से नहीं बिछुड़ता, उसी तरह एक बार जिसने बुद्ध का उपदेश सुन लिया, वह उनसे कभी अलग नहीं हो सकता। उनके उपदेश से वह सदा आनंद का अनुभव करता रहता है।

3. चाँद छिप जाता है तब लोग समझते हैं कि उसका अस्त हो गया; और वह प्रकट होता है तब लोग कहते हैं कि उसका उदय हो गया। किन्तु चाँद तो सदा विद्यमान है, उसका उदयास्त नहीं होता। उसी प्रकार बुद्ध भी सदा विद्यमान हैं, किन्तु प्राणियों को ज्ञान देने के लिए, परिनिर्वाण का अभास कराते हैं।

लोग चाँद को पूर्ण होता हुआ या घटता हुआ कहते हैं, किन्तु चाँद तो सदा पूर्ण होता है। वह न तो बढ़ता ह, न घटता है। उसी प्रकार बुद्ध भी सदा विद्यमान हैं; न तो उनका जन्म होता है, न मृत्यु। केवल जिसकी जैसी दृष्टि होती है उसके अनुसार वे जन्म लेते हुए या मरते हुए दिखाई देते हैं।

चाँद सब पर उदित होता है। नगर पर, गाँव पर, पहाड़ पर, नदी पर, तालाब के भीतर भी, घट के अंदर भी, पत्ते की नोक पर लटकती हुई

ओस की बिन्दु में भी दिखाई देता है। आदमी सैकड़ों मील चले तो भी चाँद उसके साथ-साथ चलता है। स्वयं चाँद में कोई परिवर्तन नहीं होता, किन्तु देखनेवाले आदमी के अनुसार वह अलग-अलग दिखाई देता है। उसी प्रकार बुद्ध भी, संसार के प्राणियों के अनुसार अपरिमित रूप प्रकट करते हैं, किन्तु वे अनादि-अनंतकाल तक विद्यमान रहते हैं, उनमें कोई परिवर्तन नहीं होता।

4. बुद्ध का इस संसार में अवतीर्ण तथा अन्तर्हित हो जाना भी हेतु-प्रत्यय के अधीन ही होता है। प्राणियों को धर्म का उपदेश देने का जब समय आता है तब वे संसार में प्रकट होते हैं, जब वह हेतु-प्रत्यय समाप्त हो जाता है तब वे इस संसार से अन्तर्हित हो जाते हैं।

बुद्ध में जन्म-मृत्यु के लक्षण दिखाई देने पर भी, वास्तव में न वे जन्म लेते हैं न उसकी मृत्यु होती है। इस विवेक को ग्रहण करके, बुद्ध द्वारा दर्शाए जानेवाले जन्म-मृत्यु तथा सभी वस्तुओं की अनित्यता से विचलित न होकर, सच्चे निर्वाण को प्राप्तकर प्रज्ञापारमिता की प्राप्ति कर लेनी चाहिए।

यह पहले ही कहा गया है कि बुद्ध पार्थिव शरीर न होकर निर्वाण होते हैं। पार्थिव शरीर तो वास्तव में एक पात्र होता है, उसे निर्वाण से भर देने से ही वह बुद्ध कहा जाएगा। इसलिए पार्थिव शरीर से आसक्त होकर, बुद्ध के चल बसने से दुःखी होनेवाला मनुष्य सच्चे बुद्ध को देख नहीं सकता।

वास्तव में सभी वस्तुओं की मूलप्रकृति जन्म-मृत्यु, आवागमन, पाप-पुण्य के भेदों से विरहित है। सभी वस्तुएँ शून्य होकर सम होती हैं।

ये भेद तो देखनेवाले की विकृत दृष्टि के कारण पैदा होते हैं। बुद्ध का सच्चा रूप रूप वास्तव में न तो प्रकट होता है न अन्तर्हित होता है।

3
बुद्ध के सद्गुण

1. बुद्ध पाँच उत्तम गुणों (धर्मों) के कारण पूजित होते हैं। वे हैं–श्रेष्ठ आचरण (शील), श्रेष्ठ ज्ञान-दर्शन, श्रेष्ठ प्रज्ञा, निर्वाण के मार्ग का सुस्पष्ट उपदेश करने की योग्यता तथा लोगों के उपदेश के अनुसार आचरण करा लेने की सामर्थ्य।

उनके अतिरिक्त बुद्ध के आठ श्रेष्ठ सद्गुण हैं। पहला, बुद्ध प्राणियों को हित और सुख प्रदान करते है। दूसरा, बुद्ध के उपदेश से इस संसार में तुरंत हित होता है। तीसरा, वे क्या पुण्य है क्या पाप; क्या सत् है, क्या असत्–इस बात का ठीक उपदेश करते हैं। चौथा, सम्यक् मार्ग का उपदेश करके निर्वाण प्राप्त कराते हैं पाँचवाँ, सभी लोगों का एक ही प्रकार से मार्गदर्शन करते हैं। छठवाँ, बुद्ध में अभिमान की भावना नहीं होती। सातवाँ, वे जो बोलते हैं, उसका आचरण करते हैं, जो आचरण करते हैं वही बोलते हैं। आठवाँ वे बिना किसी संभ्रम के संकल्प की पूर्तिकर के, पूर्ण रूप से अपना आचरण संपादित करते हैं।

बुद्ध ध्यान में प्रविष्ट होकर शम और शांति को प्राप्तकर, सभी लोगों

के प्रति प्रेम, दया और पक्षपातहीनता की भावना धारणकर, हृदय के सभी मलों को हटाकर, ऐसा आनन्द धारण करते हैं जो केवल पवित्र मनुष्य ही धारण कर सकता है।

2. ये बुद्ध संसार के सभी प्राणियों के माता-पिता हैं। बच्चा पैदा होने पर सोलह महीने तक माता-पिता बच्चे की आवाज़ में आवाज़ मिलाकर तुतलाती बोली बोलते हैं। उसके बाद धीरे-धीरे उसे वयस्कों की बोली सिखाते हैं। उसी प्रकार बुद्ध भी आरंभ में लोगों की समझ में आ सके ऐसी भाषा में उपदेश देते हैं, उनकी दृष्टि के अनुसार उनके सामने अपना रूप प्रकट करते हैं और उन्हें शांतिमय कंपहीन स्थिर क्षेत्र में निवास देते हैं।

बुद्ध तो एक ही भाषा द्वारा उपदेश करते हैं, किन्तु सब प्राणी अपने-अपने स्वभाव के अनुसार उसे सुनकर प्रसन्न होते हैं कि भगवान ने मेरे लिए ही यह उपदेश किया है।

बुद्ध की आध्यात्मिक अवस्था भ्रांति में फँसे हुए मनुष्य के मन के परे है। शब्दों द्वारा उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। अगर किसी तरह उस अवस्था को दर्शाना ही हो, तो दृष्टान्तों द्वारा ही वह संभव है।

गंगा नदी सदा कछुए या मछलियों, घोड़ों या हाथियों के कारण गन्दी होती रहती है, फिर भी उसका जल पवित्र होता है। बुद्ध भी इस नदी के समान हैं। दूसरे संप्रदायों की मछलियों या कछुओं आदि द्वारा स्पर्धावश

उनसे विद्रोह करने पर भी उनका मन यत्किंचित् भी विचलित नहीं होता, पवित्र ही रहता है।

3. बुद्ध की प्रज्ञा सभी धर्मों का ज्ञान प्राप्तकर, किसी एक ओर न झुकनेवाले, दो अतिरेकों से मुक्त मध्यम-मार्ग (मध्यम-प्रतिपद्) पर स्थित है। वह तो सभी लिपियों या भाषाओं की सीमा लाँघकर सभी लोगों के विचारों का जानकर, क्षणभर में इस संसार की सभी बातें जान लेती है।

शांत समुद्र में आकाश के सभी तारे प्रतिबिम्बित होते हैं, बुद्ध की प्रज्ञा के समुद्र में सभी लोगों का हृदय या उनकी भावनाएँ अथवा अन्य सभी वस्तुएँ जैसी हैं वैसी ही प्रकट होती हैं। इसलिए बुद्ध को सर्वज्ञ कहते हैं।

बुद्ध को यह प्रज्ञा सभी मनुष्यों के हृदय को स्पर्श करती है, प्रकाश देती है, मनुष्यों को इस संसार का अर्थ, उतार-चढ़ाव और कार्य-कारण के सिद्धान्त को स्पष्ट रूप से सिखाती है। सचमुच बुद्ध की प्रज्ञा के कारण ही मनुष्य अच्छी तरह इस संसार को समझ सकते हैं।

4. बुद्ध केवल बुद्ध के रूप में ही प्रकट होती हैं, ऐसी बात नहीं है। कभी तो वे पिशाच बनते हैं, कभी स्त्री का रूप धारण करते हैं, कभी देवस्वरूप बनते हें, कभी राजा या उसका मंत्री बनते हैं। कभी-कभी वेश्यालयों या जूए के अड्डों में भी प्रकट होते हैं।

व्याधि के समय वे दवा देनेवाले भैष्यज्य बनकर उपदेश देते हैं, युद्ध के समय वे सद्धर्म का उपदेश देकर वे संकट से बचा लेते हैं। संसार को स्थिर, नित्य वस्तु माननेवालों को वे अनित्यता का सिद्धान्त सिखाते हैं। अहंकार और अभिमान से भरे हुए, लोगों का वे अनात्मा का विचार समझाते हैं। जो लोग सांसारिक सुखों के जाल में फँसे हुए हैं उनको वे संसार के दुःखमय रूप, उसकी निस्सारता का दिग्दर्शन कराते हैं।

बुद्ध का प्रभाव इस संसार की सभी बातों पर दिखाई देता है, किन्तु वह सब धर्मकाय के उद्‌गम से प्रवाहित होता है। अपरिमित आयु भी, अपरिमित प्रकाश की मुक्ति भी, सबके मूल में वे धर्मकाय बुद्ध ही होते हैं।

5. यह संसार जलते हुए घर के समान सुख-चैन नहीं देता। सभी प्राणी अविद्या-जनित गहन अंधकार से आच्छदित होकर क्रोध, द्वेष, मत्सर आदि क्लेशों से विमूढ़ हो जाते हैं। बच्चे को जैसे मां की आवश्यकता होती है, वैसे ही सभी प्राणियों को बुद्ध की करुणा की शरण लेनी चाहिए।

बुद्ध सचमुच सभी ऋषियों में श्रेष्ठ ऋषि हैं, संसार के पिता हैं। इसलिए सभी प्राणी बुद्ध के पुत्र हैं। लेकिन सांसारिक प्राणी हैं वे सब कुछ भूलकर इस संसार के सुखों में ही ड्बे रहते हैं। अपने कष्टों को समझने की प्रज्ञा उनमें नहीं होती। यह संसार दुःख से भरा है और जरा, व्यधि और मृत्यु की ज्वालाएँ सदा जलती रहती हैं।

बुद्ध भ्रांतिमय संसाररूपी जलते हुए घर से हटकर, शांत और एकान्त उपवन में रहते हुए इस प्रकार पुकारते हैं :

''यह त्रैधातुक संसार मेरी अपनी संपत्ति है और उसमें रहनेवाले सभी प्राणी मेरे पुत्र हैं। अपरिमित क्लेशों से उनका उद्धार करनेवाला मैं अकेला ही हूँ।''

क्योंकि बुद्ध धर्म के महान शास्ता हैं, वे अपनी इच्छा के अनुसार सब प्राणियों को उपदेश कर सकते हैं। बुद्ध केवल प्राणियों को शांति प्रदानकर, सुख की स्थापना के लिए इस संसार में उत्पन्न होते हैं। प्राणियों को दु:ख से मुक्ति दिलाने के लिए बुद्ध ने धर्म का उपदेश किया। किन्तु कामलोलुप प्राणी न तो कान लगाकर उसे सुनते हैं, न उसकी ओर ध्यान देते हैं।

फिर भी इस उपदेश का श्रवणकर के प्रसन्न होने वाला मनुष्य ऐसी आध्यात्मिक अवस्था में पहुँच जाता है, जहाँ से उसका कभी इस भ्रांतिमय संसार में लौट आना संभव नहीं होता। बुद्ध ने कहा है, ''केवल श्रद्धा के द्वारा ही मेरे धर्मोपदेश मे प्रवेश करना संभव है।'' मतलब यह है, कि बुद्ध के वचनों पर श्रद्धा रखने से ही उपदेश सफल होता है, अपनी बुद्धि के बल पर नहीं। इसलिए बुद्ध के उपदेश का श्रवणकर के, उसपर आचरण करना चाहिए।